SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

दलित और गैर दलित उपन्यासों में नारी

लक्षेश्वरी, Ph.D., हिन्दी विभाग
किरोड़ीमल शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रायगढ़, छत्तीसगढ़, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
लक्षेश्वरी, Ph.D.
E-mail : laksheshwarikurre@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 01/09/2024
Revised on : 23/10/2024
Accepted on : 04/11/2024
Overall Similarity : 01% on 25/10/2024

शोध सार

प्रस्तुत शोधालेख में सुशीला टाकभौरे और मृदुला सिन्हा क्रमशः दलित और गैर दलित समाज का प्रतिनिधीत्व करते हैं। सुशीला टाकभौरे ने अपने उपन्यास नीला आकाश में दलित नारियों की स्थिति का सजीव और मार्मिक चित्रण अत्यंत संवेदनशीलता के साथ किया है। लेखिका स्वयं दलित समाज से होने के कारण उपन्यास में भारतीय समाज व्यवस्था का पोल खोल कर रख दिया है। मृदुला सिन्हा भारतीय संस्कृति की पुरजोर समर्थक रही हैं, उनके उपन्यास अतिशय में भारतीय संस्कृति के दर्शन होते हैं। नारी समाज का विकास भारतीय संस्कृति के दायरे में रह कर किया जा सकता है ऐसा लेखिका का मानना है। भारतीय समाज व्यवस्था पितृसत्तात्मक, धर्म और जाति आधारित होने के कारण पुरुषवादी समाज ने अपनी सुविधानुसार सारे नियम बनाये और नारी को नियंत्रित किया गया। दलित स्त्रियाँ अपनी जाति, स्त्री और दलित होने के कारण तिहरा शोषण की शिकार होती हैं, वहीं उच्चवर्गीय नारी समाज द्वारा निर्मित कानून व्यवस्था के जंजीर में फंसी रही हैं लेकिन दलित स्त्रियों की अपेक्षा उनकी स्थिती बेहतर रही है। दोनों ही लेखिका अलग–अलग परिवेश और क्षेत्र से आती है इसलिए उनकी रचनाओं में नारी के अलग–अलग स्वरुप का दर्शन होता है। प्रत्येक क्षेत्र और परिवेश की नारियों की समस्या एक जैसी नहीं होती है और उन सभी समस्याओं का समाधान एक तरीके से नहीं किया जा सकता है।

मुख्य शब्द

सुशीला टाकभौरे, मृदुला सिन्हा, नीला आकाश, अतिशय, भारतीय समाज, नारी विमर्श.

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य जगत में लेखिकाओं का आगमन

कई दृष्टियों से युगान्तकारी रहा है। लेखिकाएं अपने समय के तात्कालीन परिस्थितियों जैसे–सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक बोधों से प्रभावित होती रही हैं। लेखिकाओं ने परंपरागत एवं रुढ़िगत नारी मूल्यों को खण्डन कर एक नवीन नारी चेतना कि पृष्ठभूमि तैयार कर नारी की व सचेतन मानसिकता को अत्यंत गहराईयों के साथ उभारा है। नारी को परंपरागत दायरों से बाहर निकालकर स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान किया है। अलका सरावगी, मैत्रयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, शरद सिंह, ममता कालिया, कृष्णा सोबती, अनामिका, प्रभा खेतान, नासिरा शर्मा आदि नारी को केन्द्र में रखकर साहित्य लेखन का कार्य किया है और कर रहीं हैं। यह आलेख सुशीला टाकभौरे (दलित) और मृदुला सिन्हा (गैर दलित) लेखिका हैं, इनके क्रमशः नीला आकाश और अतिशय उपन्यास पर ही केन्द्रित है। सुशीला टाकभौरे और मृदुला सिन्हा के साहित्य में व्यक्ति और समाज दोनों की मनोवृत्तियों की अभिव्यंजना अत्यंत गंभीरता के साथ उभर कर आया है। इन लेखिकाओं ने नारी जीवन और उनकी समस्याओं को केन्द्रबिंदु बनाकर उपन्यास साहित्य की रचना की हैं। लेखिकाओं ने अपने–अपने नारी पात्रों के माध्यम से नारी जीवन के कई पहलुओं, विभिन्न रुपों में नारी के स्वरुप का मार्मिक और संवेदनापूर्ण चित्रण किया है। इन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में संदेश देती हुई मानवीय संवेदनाओं को स्थापित करते हुए सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने हेतु प्रेरित करती हैं। लेखिकाओं के नारी पात्र सामाजिक बदलाव हेतु चिंतन मनन करने को मजबूर करती है। साहित्य के माध्यम से ही लेखिकाओं ने अपने उपन्यास साहित्य में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक समस्याओं को उठाई ही नहीं हैं बल्कि ध्वनित भी किया है।

सुशीला टाकभौर

सुशीला टाकभौरे ने अपने साहित्य में दलित नारी हो या उच्चवर्गीय नारी हो, नारी समाज की कथा–व्यथा को अपनी लेखनी का केन्द्र बनाया है। सुशीला टाकभौरे ने दलित समाज और दलित नारियों के समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित कराया है। महात्मा फुले, पेरियार रामास्वामी और बाबा साहाब अम्बेडकर जी के विचारधारों का पूर्ण प्रभाव इनके साहित्य में स्पष्ट दिखाई देता है। टाकभौरे के साहित्य में नारी का उग्रवादी रुप दिखता है।

सामाजिक स्तर

सुशीला टाकभौरे के नीला आकाश उपन्यास में दलित समाज की सामाजिक स्थिति का चित्रण अत्यंत मार्मिकता के साथ किया गया है। दलित समाज और नारी का जीवन शिक्षा के अभाव में कष्टों से भरा हुआ है। दलितों का सामाजिक स्थिति दयनीय है। उनको सभ्य समाज के बस्ती से दूर गांव के बाहर रहना पड़ता है, इसी से स्पष्ट होता है कि दलित नारी की समाजिक स्थिति बद् से बद्तर है। समाज में उनके अस्तित्व को ही नकार दिया जाता है। दलित समाज के लोगों को जीवनयापन के लिए उच्चवर्गीय समाज पर निर्भर रहना पड़ता है–''सेवानगर के लोग पीने का पानी सवर्ण बस्ती के कुएं से, दूर खड़े रहकर मांग कर लाते हैं। वे जहां काम करते हैं, उन घरों से बचा हुआ जूठा, बासा भोजन, रोटी टुकड़ा, अनाज, फटे पुराने कपड़े मांगकर लाते हैं। उनका जीवन मांगकर लाई वस्तुओं पर ही चलता है। वे कठिनाई के साथ अपने परिवार का पालन पोषण करते हैं।'' दलितों की स्थिति समाज में पशुओं से भी बद्तर था। भारतीय समाज नदी, पहाड़ पौधे, पशुओं की पूजा करते है, परंतु विचारशील और भावनाओं से भरे दलित नारियों को अछूत मानकर उनका अपमान करते हैं। समाज में दलित पुरुष का कोई अस्तित्व नहीं है तो नारी की क्या बिसात है। दलितों की स्थिति के संबंध में ओम प्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं–''दलितों का जीवन जहाँ सामाजिक उत्पीड़न, शोषण, दमन से भरा हुआ है, वहीं व्यवस्था के नाम पर लादी गयी मर्यादाएँ, बंधन दलित जीवन की विपन्नताएँ बनकर रहे हैं। आर्थिक विवशताओं और विसंगतिपूर्ण स्थितियों ने दलित जीवन को नरक बनाया है। ग्रामीण परिवेश के जातीय उत्पीड़न से पलायन कर शहरों, महानगरों की ओर आने वाले दलितों के भीतर हीनता भाव इतना गहरा होता है कि उसे कोई भुक्तभोगी ही जान सकता है।'' दलित समाज के संबंध में सवर्ण समाज का मानना है कि उनका जन्म ही हमारे सेवा के लिए हुआ है। ''कितनी भी कलाकारी करो, कितनी भी प्रगति करो, आखिर जात तो वही रहती है। ये जात–पात, भेदभाव की बात, लोग भूलते क्यों नहीं ?'' इस कथन से ही स्पष्ट हो जाता है कि दलितों का सामाजिक स्थिति अच्छी नहीं है।

आर्थिक स्तर

बेगारी प्रथा के कारण दलित समाज घोर विपन्नता का शिकार हो गया। दलित समाज के स्त्री पुरुष सभी को बंधुआ मजदूर बनाकर बेगारी करने के लिए विवश कर दिया जाता है। आर्थिक शोषण करना भारतीय समाज का हिस्सा रहा है। बेगारी के कारण उत्पन्न आर्थिक समस्याओं और शोषण की स्थितियों को पूरे सच्चाई के साथ सुशीला जी ने 'नीला आकाश' उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। बुधिया बेगारी का काम करने के लिए विवश है। ''सुबह के काम के बाद दोपहर में 3–4 घंटे उनसे बेगारी कराई जाती है। मुकद्दम जो काम बताए–नाली खोदना, गड्ढे भरना, घास निकालना, गटर साफ करना–सब करना पड़ता है।'' यदि कार्य संतुष्टि योग्य नहीं हुआ तो उनके साथ सरेआम अभद्रतापूर्ण व्यवहार किया जाता है। दलितों के लिए बेगारी एक ऐसी समस्या है जिसका निराकरण शिक्षा के अभाव में संभव ही नहीं है। बेगारी प्रथा के बारे में ओमप्रकाश वाल्मीकि लिखते हैं कि–''जिस पंचायत राज की कशीदेकारी से हिन्दी साहित्य भरा पड़ा है, वहीं पंचायती राज दलितों के लिए अभिशाप होता है। गाँव के खेतीहार मजदूर दलित ही होते हैं। बेगारी प्रथा ने दलितों को घोर विपन्नता दी है। 'बेगारी यानी बिना मूल्य का श्रम'। दिन भर मेहनत मजदूरी करके शाम को भूखा रहे, यह अभिशाप नही तो और क्या है?'' बेगारी प्रथा के कारण दलित वर्गों का जीवन कष्टकारी हो गया है।

इस समाज के लोग अपनी जाति के कारण परंपरा से चली आ रही कार्यों को करने के लिए विवश है क्योंकि सवर्ण समाज उनको दूसरा कोई काम करने नहीं देता है। उनके कार्यों के साथ जाति जोंक की तरह चिपका हुआ है–''रोजगार के साथ जाति का संबंध जुड़ा है, मानो रोजगार ही हमारी पहचान है। लोग हमसे नफरत करते हैं, हमारी जाति को छोटा मानते हैं। जाति कभी जाती नहीं है। लोग किसी का परिचय पाने के लिए, पहले उसकी जाति पूछते हैं। गांव में आए अनजान लोग और दूसरे गांव में जाने पर, वहाँ मिले अनजान लोग किसी न किसी तरह पता लगा ही लेते हैं कि हमारी जाति क्या है।'' जाति के आधार पर कार्यों का विभाजन होने के कारण दलितों की आर्थिक स्थिति निम्न स्तर की है। रोजी–रोटी की तलाश में दलित स्त्रियों को दोहरा काम का मार सहना पड़ता है। घर की जिम्मेदारी तो निभानी ही पड़ती है साथ ही उनको बाहर भी काम पर जाना पड़ता है। बुधिया सवर्ण बस्ती के शौचालय साफ करने जाती है और चंदरी–''गांव के स्कूल के आसपास और बैंक के ऑफिस में झाड़ू–बुहारी लगाने का काम करती है। वह दाई का काम भी करती है। जचकी के बाद सौर घर की सफाई और जच्चा–बच्चा की तेल मालिश का काम महिना या सवा महिने तक चलता है। ऐसे दिनों में पाव–आधा किलो अनाज और कुछ रुपए की कमाई होती है।'' अपनी गरीबी के कारण इनको अनिच्छापूर्वक हर वो काम करना पड़ता है जिनको ये करना नहीं चाहती हैं। इसके बावजूद भी पेटभर खाना नहीं मिलता है। टाकभौरे के नारी पात्र आर्थिक स्तर पर कमजोर है और अर्थ के लिए संघर्ष करती हैं।

आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होने के कारण दलित समाज के लोग अपनी बेटियों की शादी जल्दी कर देते है। कम उम्र में ही लडकियों के कंधों पर परिवार की जिम्मेदारी ड़ाल दी जाती है। अभावग्रस्त जीवन जीती हुई लड़कियों को ठीक से पता ही नहीं होता कि बचपना क्या है। बुधिया अपनी बेटी की शादी ग्यारह साल के होते ही कर देती है। वहीं चंदरी अपनी बेटियों की शादी आर्थिक विपन्नता के कारण बहुत जल्दी करने की सोचती है और अपने पति से कहती है–''चार बेटियों की शादी अलग–अलग करना तो बड़े खर्च की बात होगी। हम दो–दो बेटी का ब्याह एक ही मंडप से करेगें। दोनों की जोड़ी के अच्छे वर ढूंढ़ो। ऐसे रिश्तेदार देखो, जो समझदार हों। सीता और राधा की बरात एक ही दिन अपने घर आयेगी। बाद में ऐसे ही लक्ष्मी और पार्वती की एक ही लगन में शादी कर देगें।'' इस समाज में बेटी की शादी करना कठिन काम है क्योंकि विवाह के लिए कर्ज लेना पड़ता है जिससे घर की स्थिति और भी खराब हो जाती है। दलित समाज में दहेज प्रथा नहीं होने के कारण आशावादी सोच और विचार के साथ जैसे तैसे अर्थात् घर की आर्थिक स्थिति के अनुरुप बेटियों को विदा कर दिया जाता है।

धार्मिक स्तर

सुशीला टाकभौरे के नारी पात्र धार्मिक भी हैं। उनके नारी पात्र अंधविश्वासी है और अपने सुखी जीवन के

लिए उपवास, व्रत करते है। दलित नारी को दो जून का भोजन भी ठीक से नहीं मिलता है उसके बावजूद भी दलित समाज की स्त्रियां धर्म और धार्मिकता को आवश्यक मानती है। चंदरी की सास धर्म को जीवन जीने के लिए आवश्यक मानती है इसलिए धर्म को प्राथमिकता देती हुई चन्दरी से कहती है–''पूजा करना, तो अच्छे से करना। खर्च में कमी नहीं करना। भले ही हमें महिना–पन्द्रह दिन भूखा रहना पड़े, मगर पूजा के दिन कोई कमी नहीं होना चाहिए।'' दलित समाज में भी धर्म का प्रभाव इतना अधिक है कि यदि किसी प्रकार का प्राकृतिक आपदा आ जाती है तो उसको भी ईश्वर का प्रकोप मानने लगते है। अपनी जाति, दलित समाज में जन्म लेना और सवर्ण द्वारा अपमानित किये जाने पर भी दलित समाज अपने को पापी समझकर कहता है, हमने पूर्व जन्म में अवश्य ही बुरा कर्म किया है इसलिए इस जन्म में अछूत रुप में जन्म लिए है। आपसी लड़ाई–झगड़े हो जाने पर भी भगवान का ही प्रकोप मानते है–''जरूर किसी देवता का प्रकोप है। कलजुग की आग बरसे और देवता का उदय न हो? पंडित जी को कितना तड़पाया है, मुंषियानी और मुंशी की आत्मा सताई है, मजाक है? इस पापिन का घर तो खुद ही खाक हो जाएगा। सरग में थूक रही है। देखो बस खिड़की जलकर रह गई, भगवान की चेतावनी।'' लेखिका कहती है कि शिक्षा के अभाव में धर्म की भावना दलित नारियों में कुट–कुटकर भरा हुआ है।

दलित समाज में धर्म को लेकर मान्यता है कि ईश्वर का नाम लेने से मुक्ति मिल जायगी और अगले जन्म में हमें अछूत के रुप में जन्म लेना नहीं पड़गा। ईश्वर का नाम लेने और अपना आस्था उसके प्रति व्यक्त करने का सबसे आसान रास्ता है अपने बच्चों का नाम भगवान के नाम पर रख दिया जाए, जिससे भगवान का नाम लेते रहने में आसानी होगी और मुक्ति के लिए ईश्वर के नाम का जाप भी हो जाएगा– ''भगवान का नाम लेने से मोक्ष मिलता है। धर्म से ही स्वर्ग मिलता है इसलिए अपने जीवन में, उठते–बैठते समय भगवान का नाम लेते रहना चाहिए। भगवान का नाम पुकारने का सबसे सरल और सहज तरीका है, अपने बच्चों का नाम भगवान के नाम पर रखो।

सदियों से चली आ रही भारतीय समाज की धार्मिक मान्यताओं, परंपराओं को दलित अछूत भी स्वीकार करते हैं। धर्म के अनुसार ही अपना जीवन जीते हैं। धर्म उसे दान लेने के लिए प्रेरित करता है। सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहण के समय ग्रहण छूटने पर धर्म का पालन करते हुए दान मांगते हैं दे दान, छूटे ग्रहण....। धर्म के नाम पर दलित समाज में अंधविश्वास फैला हुआ है कि ग्रहण का दान लेने से अगले जन्म में अछूत जाति में जन्म लेना नहीं पड़ेगा। अंधविश्वास के कारण ही ये समाज के लोग बीमार पड़ने पर भी भूत प्रेत और चुड़ैल का प्रकोप समझकर ओझा के चक्कर में पड़ जाते है जिसके कारण धन और जन दोनों से हाथ धोना पड़ता है। धर्म के नाम पर इन सब को अपना नियति मानते है। जीवन में कभी सुख की अनुभूति हो जाने पर ईश्वर कृपा मानकार धार्मिक कर्मकाण्ड करने लग जाते है। चन्दरी अपने पुत्र रामकिशन के नौकरी लगने पर भगवान ने दया किया समझकर पूरे समाज को खाना खिलाती है और घर पर पूजा रखती है। चन्दरी कहती है–''कुछ अपने देवता की मेहरबानी है। रविवार के दिन हमारे घर बड़ी पूजा है। सबका खाना हमारे घर में होगा। तुम अपने घर खाना मत बनाना। मैंने मन्नत मानी थी, रामकिशन की नौकरी के लिए, उसी की पूजा कर रहे हैं।'' इस प्रकार के घरों में होने वाले धार्मिक पूजा–पाठ दलित समाज में धर्म और भक्ति के प्रति उनमें धार्मिक उन्माद पैदा करते हैं।

सवर्ण समाज द्वारा धर्म का सहारा लेकर दलित समाज और दलित नारियों के मन में रीति रिवाज, अंधविश्वास का डर दिखाकर शिक्षा से दूर रखने का प्रयास किया जाता रहा है। चन्दरी हमेशा अपने बच्चों के सपने पूरा करने के लिए देवताओं से मनौतिंया मांगते हुए कहती है–''बाबा, मेरे बच्चे की लाज रखना। मेरे बच्चे पर अपनी छत्रछाया रखना।'' दलित समाज के लोगों में यह भावना भरा गया है कि बुरा कर्म करने के कारण ही तुम लोगों का जन्म दलित समाज में हुआ है। टाकभौरे ने अपने साहित्य में धार्मिक पक्ष को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ व्यक्त किय है। भारतीय समाज में धार्मिकता के नाम पर दलित स्त्रियों का शोषण और अपमान कई तरह से किया जाता रहा है। दलित स्त्रियों में शिक्षा का अभाव होने के कारण भूत–प्रेत, सगुन–अपसगुन, बलि, आदि कुरीतियों में फंस जाते हैं। लेखिका ने धर्म और धार्मिकता की भावना को दलित समाज एवं नारी के विकास मार्ग में बाधा के रुप में चित्रित किया है। उनका मानना है कि धर्म के नाम पर सवर्ण समाज दलित नारी का हर प्रकार से शोषण करता है और उनके अधिकारों से वंचित करता है।

उच्चवर्गीय समाज के लोग अपने बच्चों के मन में दलित बच्चों के प्रति धर्म के नाम पर ही घृणा–भाव भर देते हैं और उनसे दूरी बनाने को कहते हैं। लेखिका धर्म के नाम पर उच्चवर्गीय समाज की मानसिकता के संदर्भ में लिखती हैं–''मांग अछूत बच्चों के पास नहीं बैठना। इनके हाथ का कुछ खाना नहीं, पीना नहीं।'' धर्म का प्रभाव समाज में इतना अधिक व्याप्त है कि शिक्षक भी शिक्षा देने के समय इसके प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाता है। शिक्षक धर्म का अनुसरण करता हुआ चंदरी से कहता है–''अरे, अरे, चन्दरी, तेरी बेटियों को हिन्दू महाजनों के बच्चों के बीच मत बैठा। उधर पीछे अलग से बैठा दे। इन बच्चों के माँ बाप आकर देखेंगे, तो मुझे ही बुरा भला कहेंगें।'' उपन्यास में धर्म के नाम पर छुतअछूत और भेदभाव की भावना प्रत्यक्ष रुप में दिखाई देता है। धर्म के नाम पर सवर्ण समाज दलित समाज के स्त्री–पुरुष और बच्चों को प्रताड़ित करते रहते है।

बदलते परिवेश और शिक्षा के प्रचार प्रसार के कारण दलित समाज में भी चेतना का संचार होता है और वे धर्म को अपने विकास मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाले कांटे के समान मानने लगते है। चंदरी और भीकूजी जो पूर्व में धार्मिक प्रवृत्ति के थे दलित जागृति आंदोलन और डॉ. अम्बेडकर के विचारों से अवगत होकर शिक्षा के महत्व को समझने लगे हैं। दलित समाज के लोगों को अन्दोलन के माध्यम से ज्ञात होता है कि धर्म के नाम पर उनको अब तक छला जाता रहा है और उनकी भावनाओं के साथ खिलवाड़ किया गया है। चंदरी के साथ ही उसका परिवार भारतीय समाज द्वारा अपने हित के लिए उन पर थोपे गए धर्म को त्याग दिया जाता है। शिक्षा के द्वारा वे अपने समाज में फैले अंधविश्वास को दूर करने का प्रयास करते है। इस कार्य में भीकूजी अपनी पत्नी चंदरी का साथ देते हुए कहते हैं–''अब हम इस तरह बलि देने की पूजा नहीं करेंगे, दूसरे लोगों को भी यह बात समझायेगें। अंधविश्वास से पूर्ण पूजा अनुष्ठानों का हम विरोध करेंगे।'' धर्म के नाम पर परंपरागत तरीके से चली आ रही अंधविश्वासों को दूर करने का प्रारंभ चंदरी–भीकूजी अपने घर से करते हैं। भीकूजी सबके सामने विनम्रतापूर्व हाथ जोड़कर अपने संकल्प के बारे में बताते हैं। अपने घर होने वाली पूजा के दौरान काटे जाने वाले बकरे को मौत के घट उतारने से बचाते हुए कहते हैं–''बाबा ने पूजा कबूल की। यह बाबा के नाम का बकरा है। इस पर अब किसी का अधिकार नहीं है। यह मुक्त, स्वतंत्र है। हम इसे मारेंगे नहीं, इसे जिन्दा रहने देंगे। आज से मैं अपने घर में बलिप्रथा को बंद कर रहा हूँ।'' दलित समाज मानव जीवन के विकास, एकता और सामाजिक समता के लिए धर्म से ज्यदा महत्व शिक्षा को देता है।

शिक्षा प्राप्त करने के बाद दलित स्त्रियों में तर्क करने की शक्ति का संचार होने लगता है और वे धार्मिक मान्यताओं का खण्डन करने लगती हैं। अपने समाज में सुधार लाने का प्रयास करती हैं। जीवन में प्रकाश पूंज की ज्योति शिक्षा से आती है और मेहनत से सफलता मिलती है कहते हुए ईश्वर पर विश्वास को व्यर्थ बताती हैं। अब दलित नारियों की धर्म के प्रति मन की भावनाएं बदलती जा रही है। धर्म को फरेब और आडम्बर मानकर उसे स्वीकार करने से इंकार कर रहे हैं। धर्म के विषय में लेखिका लिखती हैं–''हिन्दू धर्म में नदी, पहाड़, पेड़, पौधे, जानवर सभी को महत्व और सम्मान दिया जाता है लेकिन अछूत मनुष्यों को कोई स्थान नहीं, कोई सम्मान नहीं। हिन्दू धर्म के आडम्बर में मिट्टी से बने पुतलों को भी भगवान की तरह पूजा जाता है, मगर इंसानों को इंसान नहीं मानते। यह हिन्दू धर्म की विडम्बना है, हिन्दू संस्कृति का कलंक है। लोग इसे ही धर्म कहते हैं।'' सदियों से शोषित दलित समाज अब जान गया है कि उनका उद्धार धर्म के माध्यम से नहीं होने वाला है। शिक्षा रुपी अग्नि में तपकर दलित समाज सवर्ण समाज की धार्मिक पाखंड को समझ चुका है। अब धर्म के नाम पर उनको डरान और उनका शोषण करना आसान नहीं है। धर्म और धार्मिक मूल्यों के प्रति अब दलित समाज नकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं। जाति व्यवस्था के प्रति दलित समाज अब जागरुक हो गया है और जाति के नाम पर होने वाले धार्मिक अन्याय और अत्याचार का विरोध करने लगे है।

मृदुला सिन्हा

मृदुला सिन्हा भारतीय जीवन मूल्य और संस्कृति की प्रखर प्रवक्ता रही हैं। इन्होंने अपने लेखन का आधार पौराणिक नारी पात्रों के आदर्श और चरित्र को बनाया है। लेखिका के विचारधारा भारतीय परंपरा से लबरेज रहा है इसलिए इनके साहित्य में नारी उदारवादी रुप दिखायी देता है।

सामाजिक स्तर

मृदुला सिन्हा ने 'अतिशय' उपन्यास में पौराणिक कथा वस्तु को आधुनिक रुप में प्रस्तुत किया है। शिवानी और शर्मिष्ठा उपन्यास की नायिका है। ये दोनों नारी पात्र सवर्ण समाज की है और इनकी सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी है। दोनों की समाज में जो मुकाम और सम्मान है उसी से ही दोनों की बेहतर सामाजिक स्थिति का ज्ञान होता है। सवर्ण समाज और उस समाज की स्त्रियों को देखने का सामाजिक नजरिया अलग ही है। शिवानी का पति चरित्रहीन है पर सभ्य समाज का होने के कारण समाज में उसका मान सम्मान सब कुछ है। अपनी चारित्रिक दोष के कारण उसका व्यापार खत्म होने के कगार पर आ जाता है उसके बावजूद भी सवर्ण समाज के होने के कारण उसका सामाजिक स्थिति बेहतर है। भारतीय संस्कृति और परंपरा को आत्मसात करने वाली शिवानी भी पति की अपराधों को माफ कर देती है और अपनी कंपनी 'शिवानी क्लॉथ मिल' को स्वयं सुचारु रुप से संचालित करती है। 'शिवानी क्लॉथ मिल' के देष विदेष में प्रसिद्ध होने के कारण समाज में अपना एक खास पहचान और स्थान रखती है।

शर्मिष्ठा सम्पन्न परिवार की लड़की है, और पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित है। उसके प्रभाव में आकर वह समाज द्वारा निर्मित मान्यताओं और नियम कानून को ताक पर रखकर बिना विवाह किये 'शिवानी क्लॉथ मिल' के मालिक यति के साथ अवैध संबंध स्थापित करती है। उसके बच्चे को जन्म देती है, पिता का नाम नहीं मिलने के बावजूद भी समाज में उसकी स्थिति अच्छी है। आज नारी अपने लिए पुरुषवादी समाज द्वारा निर्मित किये गये बाडे को तोड़कर बाहरी दुनिया से सम्पर्क स्थापित कर लिया है, जिसके कारण नारी का कार्य क्षेत्रों में भी बढ़ोत्तरी हो रही है। नारी अपनी प्रतिभाओं का प्रयोग खुलकर कर रही है। उसके बावजूद भी पुरुष समाज उसे कमतर ही आंकता है।

आर्थिक स्तर

मृदुला सिन्हा के नारी पात्रों की आर्थिक स्थिति बेहतर है। शिवानी और शर्मिष्ठा दोनों ही शिक्षित और सम्पन्न परिवार और समाज की नारियां है। सम्पन्न परिवार में जन्म होने के कारण इनको कभी भी अर्थ का अभाव नहीं हुआ। आर्थिक विपन्नता से दोनों का कभी सामना नहीं हुआ। शिवानी वस्त्र कंपनी के मालिक यति की पत्नी है। घर की साज–सजावट से ही आर्थिक सम्पन्नता का भान हो जाता है। वैभव सम्पन्न शिवानी के घर का चित्रण लेखिका उपन्यास के पात्र हरीश के माध्यम से इस प्रकार करती हैं–''जब मेम साहब पहली बार ब्याहकर आई थीं, तब महारानी बाग की कोठी किसी राजप्रसाद से कम नहीं सजी–धजी थी। स्वयं साहब ने दिल्ली के श्रेष्ठ कलाकारों को बुलाकर सजवाई थी। क्या रौनक थी! ब्याह के उपरांत कुछ बर्षों तक मेम साहब अकसर इलाहाबाद चली जाया करती थीं, तब भी उनके आने के पूर्व वृहत् साफ–सफाई करवाई जाती थी।'' हरीश के इन बातों से शिवानी की सम्पन्नता और वैभव का परिचय मिलता है। शर्मिष्ठा के आर्थिक सम्पन्नता के संदर्भ में शिवानी कहती है–''हूँ.... कितना घमंड था उसे धन और रूप पर! चल संपत्ति की प्राप्ति पर गर्व कैसा? वह भी ढ़लता जाता है, पूनम के चाँद की तरह। रूप–लावण्य में तो शर्मिष्ठा मुझसे बीस नहीं थी। सज–धजकर रहती थी। भड़कीले कपड़ों में लिपटी चमचमाती कार से उतरते ही इर्दगिर्द खड़े कॉलेज के छात्रों का ध्यान खींच जाती। शर्मिष्ठा उन पर रौब गाँठती थी? रौब कैसा? कॉलेज के संस्थापक की पोती तथा तत्कालीन कॉलेज सेक्रेटरी की बेटी होने का?'' सम्पन्न परिवार की शर्मिष्ठा समाज में अपनी एक अलग पहचान बनाने और अपने जीवन का निर्णय स्वयं लेने के लिए 'शिवानी क्लॉथ मिल' में नौकरी करती है।

धार्मिक स्तर

मृदुला सिन्हा धर्म को आस्था का प्रतीक मानती है। व्रत, उपवास, त्यौहार, पर्वों और उत्सव को भारतीय धार्मिक मान्यताओं के अनुरुप ही अपने उपन्यास में चित्रित किया है। 'अतिशय' उपन्यास में धर्म मानव जीवन के लिए एक ताकत और मजबूती के रुप में दिखाई देता है। उनका मानना है कि धर्म की महत्ता को साहित्य के माध्यम से आसानी से जनता तक पहुँचाया जा सकता है–''धर्म वह है जिसे धारण किया जा सके। इसी प्रवृति के अनुकूल हमारा साहित्यिक चिंतन विकसित होता है और धर्म की स्थापना के लिए मनुष्य–मनुष्य के बीच संवेदनशीलता का

तंतु बुनता है। धार्मिक मूल्यबोध के अन्तर्गत पौराणिक पात्रों की आधुनिक सृष्टि, व्रत–त्योहार, पर्वों की संस्कृति, आध्यात्मिक ज्ञान की अभिव्यक्ति, ईश्वरीय सत्ता में विश्वास आदि को परिगणित किया जा सकता है। इस सभी धार्मिक मूल्य बोधों को प्रसारित करने का साहित्य भी एक जरिया है जीवन में धर्म रुपी पौधे को रोपने, पल्लवित और विकसित करने का। इसी धर्म रुपी पौधे को मृदुला सिन्हा अपने कथा साहित्य के माध्यम से रोपती है, स्थापित करती हैं–भारतीय चिंतनशीलता की विराट छाँव में।'' लेखिका ईश्वरी सत्ता पर विश्वास करती है और धर्म को मानव जीवन के विकास मार्ग के लिए आवश्यक मानती है। उनके उपन्यास में धर्म का प्रभाव प्रारंभ से अंत तक स्पष्ट दिखता है। लेखिका के नारी पात्र ईश्वरवादी, भाग्यवादी और नियतिवादी हैं। वे मानव का बनना, बिगड़ना भाग्य के हाथ में है, और उसे ईश्वर की देन समझकर स्वीकार करते है। शिवानी जीवन में संयम को आवश्यक मानती है और उसके लिए धर्म को प्राथमिकता देती है। धर्म के संबंध में जैनेन्द्र लिखते हैं कि–''धर्म आवश्यक है, उसी तरह जैसे मकान के लिए नींव आवश्यक होती है। कर्म की सफलता के लिए धर्म की स्थिरता जरूरी है।''

लेखिका का मानना है कि धर्म ही मानव जीवन को श्रेष्ठता प्रदान करता है। उन्होंने ईश्वर को प्राप्त करने का एक सरल माध्यम गृहस्थ जीवन को बताया है। गृहस्थ जीवन की महत्ता प्रतिपादित करते हुए मृदुला सिन्हा अपने पात्र रजनीश के द्वारा कहलवाया है कि–''हाँ, तो मैं गृहस्थ जीवन का महत्व बता रहा था। जितनी मेरी अपनी समझ है, स्त्री–पुरुष का मिलन केवल शारीरिक नहीं होता, मन का मिलन होता है। सच्ची प्रीति बढ़ते–बढ़ते आत्माओं का मिलन हो जाता है। दो आत्माओं का मिल नही ईश्वर–प्राप्ति का मार्ग है। प्रत्येक मनुष्य के शरीर में जो आत्मा है, वही ईश्वर है। उसी की पहचान के लिए, उसके अस्तित्व के एहसास के लिए ही सब योग, तप, वैराग्य हैं। तुम लोगों को ये सब गृहस्थी में मिल सकते है।'' मनुष्य गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर के धर्म का पालन आसानी से कर सकता है। धर्म के द्वारा ही वैवाहिक और गृहस्थ जीवन सुचारु रुप से संचालित होता है। मृदुला के नारी पात्र धर्म को मानने वाली हैं और धर्म के द्वारा ही अपने जीवन को संचालित करती है। रमी क्रिश्चन धर्म की है। वह प्रभु यीशु की सत्ता पर विश्वास करती है और जन्म–मरण की प्रक्रिया को उनके द्वारा संचालित मानती है इसलिए अपनी बेटी की प्रसव के द्वारा हुई मृत्यु को प्रभु इच्छा कहती है। जन्म और मृत्यु भी धर्म की प्रक्रिया है और इससे सबको एक दिन गुजरना ही है। इस संबंध में जैनेन्द्र लिखते हैं–''किसे मरना नहीं है, और कौन किसे मार सकता है? जन्म–मृत्यु तो है, बिना इसके सृष्टि नहीं। काल के ये अस्त्र हैं, इन्हीं औजारों से उसकी सब रचना है। इस द्विधा में राग क्या और द्वेष क्या?'' हर धर्म में कहा जाता है कि माँ बनना भी ईश्वर की कृपा है और गर्भपात करवाना पाप है। रमी शर्मिष्ठा को गर्भपात करवाने से रोकर उसे पाप करने से बचा लेती है और कहती है–''कोई नष्ट नहीं करवा सकता बच्चे को। मैं बच्चे को जन्म दिलावाऊँगी और पालूँगी भी।'' धर्म मानव समाज को पाप और पुण्य का अंतर सिखाकर उसे अधर्म और पाप करने से बचा लेता है जैसे रमी ने शर्मिष्ठा को अधर्मी और पापनी बनने से बचा लिया। उपन्यास में लेखिका ने धर्म बोध का अत्यंत सजीव चित्रण किया है। शिवानी, रमी धार्मिक नारी पात्र की परिकल्पना को सकार रुप प्रदान कर देती है।

नारी को अपने जीवन काल में धर्म का पालन हर हाल में करना चाहिए, क्योंकि धर्म ही नारी जीवन को सफल बनाता है। शिवानी इसी भावना से प्रेरित होती है और अपने प्रतिव्रत धर्म का पालन करती है। धर्म नारी जीवन का मार्ग प्रश्स्त करता है और उसकी त्याग, प्रेम भाव और क्षमाशीलता उसे महान बनाता है इसलिए शिवानी अपने चरित्रहीन पति यति को माफ कर देती है। लेखिका कहती हैं कि–''शिवानी ने यति को क्षमा करके हरि का क्षमा दान भी छोटा कर दिया। विष्णु ने भृगु द्वारा लात खाकर भी उसे क्षमा कर दिया था। बड़े क्षमादानी कहलाए, परंतु, यति के शिवानी के प्रति किए गए अपराध की तुलना भृगु के अपराध से नहीं की जा सकती। यति का अपराध उस अपराध से अधिक संगीन था। शिवानी ने क्षमादान दे दिया। एक साधारण स्त्री ने इतना बड़ा असाधारण कार्य कर दिखाया। यही नारी का रुप है।'' धर्म नारी को त्याग और समपर्ण करना सिखता है और नारी धर्म का पालन कर अपना जीवन सुखमय बनाती है। धर्म का अनूठा चित्रण लेखिका ने शिवानी के माध्यम से किया है।

निष्कर्ष

सदियों से परंपरा और रूढ़ियों की जंजीरों में जकड़ी स्त्रियों की स्थितियों–सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक

स्तर आदि को लेखिकाओं ने अपने–अपने साहित्य में पूरी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किया है। समाज में नारियों की स्थिति एक जैसी नहीं होती है। परिवेशगत भिन्नताओं के कारण समाज में उनकी स्थिति भी भिन्न–भिन्न होती है। मृदुला सिन्हा के नारी पात्र उच्चवर्गीय समाज के होने के कारण शिवानी और शर्मिष्ठा को समाज में सम्मान और नाम दोनों प्राप्त है। टाकभौरे के नारी पात्र चंदरी और बुधिया दलित समाज की होने के कारण उनको जीवनपर्यंत अपनी स्थिति को हर क्षेत्र में बेहतर बनाने के लिए संघर्ष करना पड़ता है।

संदर्भ सूची

1. टाकभौरे, सुशीला (2013) *'नीला आकाश',* विश्वभारती प्रकाशन, विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर, पृ. 15, 20, 22, 24–25, 27, 38, 47, 50, 52।
2. वाल्मीकि, ओमप्रकाश (2001) *दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र,* राधाकृष्ण प्रकाशन, राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 76।
3. सिंह, एन. (2012) *'दलित साहित्य के प्रतिमान',* वाणी प्रकाशन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 261।
4. पद्मावती, जी. (2021) *'इक्कीसवीं सदी की लेखिकाओं की कहानियों में स्त्री विमर्श',* विकास प्रकाशन, कानपुर, पृ. 86।
5. टाकभौरे, सुशीला (2023) *'शिकंजे का दर्द,* वाणी प्रकाशन', नई दिल्ली, पृ. 48।
6. सिन्हा, मृदुला (2016) *'अतिशय,* प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, पृ. 43, 45, 54, 85, 127।
7. शर्मा, अखिलेश कुमार, (2017) 'मृदुला सिंहा के कथा साहित्य में मूल्यबोध' शोध प्रबंध 19।
8. सिहमार, बलराज (2002) *'मानव–मूल्य और स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास',* खामा पब्लिशर्स, दिल्ली, पृ. 58।

****